DOI: 10.51220/hjssh.v9i1.15

Himalayan J. Soc.Sci. & Humanities Vol- 9 pp.93 - 96, December, 2014, ISSN. 0975 - 9891

देवतात्मा हिमालय महाकाव्य में वर्णित प्रकृति

ललिता
संस्कृत विभाग
हे0 न0 ब0 गढ़वाल विश्वविद्यालय परिसर, पौड़ी गढ़वाल

Received: 02-03-2014 **Accepted: 08-10-2014**

ABSTRACT

प्रस्तुत शोध पत्र में डॉ0 अशोक कुमार डबराल द्वारा रचित महाकाव्य ''देवतात्मा हिमालय'' में कवि द्वारा वर्णित प्रकृति चित्रण के विभिन्न रूपों का तथ्यपरक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

KEY WORDS-डॉ0 अशोक कुमार डबराल, देवतात्मा हिमालय, महाकाव्य, प्रकृति चित्रण

प्रकृति का शाब्दिक अर्थ है स्वभाव, वह मूल सत्ता जिसका परिणाम जगत है। माया परमात्मा तथा पंचभूत आदि कविता में प्रकृति चित्रण से तात्पर्य है कवि का सात्विक वृत्ति का आधार सहज एवं स्वाभाविक चित्रण करना। इस व्याख्या से स्पष्ट हुआ कि मानव प्रकृति का एक अंश है।

प्रकृति भाव स्फूरण की आधारशिला है। प्रकृति का सौन्दर्य शाश्वत है। इसके सौन्दर्य पर मानव जगत की उथल-पुथल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। आदिकाल से लेकर अब तक विभिन्न कवियों की सामाजिक वृत्ति में विभिन्नता के फलस्वरूप उनकी प्रवृत्ति निरीक्षण और अनुभूति के अनुसार प्रकृति का चित्रण भी भिन्न-भिन्न रूप से हुआ है तथा प्रकृति को कवियों ने अपने काव्यों में प्रमुख स्थान दिया है। इसी परम्परा का अनुसरण वर्तमान कवि डॉ0 अशोक कुमार डबराल ने भी महाकाव्य 'देवतात्मा हिमालय' में किया है।

(क)-प्रकृति का आलम्बन रूप

डॉ0 डबराल के काव्य से प्रकृति का आलम्बन रूप विद्यमान है।

''आलम्बनों नाविकादिस्तमालम्ब्य रसोद्गमात्[1]''

अर्थात जिस व्यक्ति अथवा वस्तु के कारण नायक आदि में कोई भाव जागृत होता है उस व्यक्ति अथवाव स्तु के भाव को आलम्बन विभाव कहते हैं। आलम्बन विभाव ही वास्तविक रसभूमि है। देवतात्मा हिमालय महाकाव्य में निम्न प्रकार से प्रकृति का आलम्बन रूप प्रस्फुटित हुआ है।

1. नाद व्यंजना-प्रकृति स्वत: संगीतमयी है। इसमें कवि को चारो ओर नाना प्रकारकी ध्वनियां कर्णगत होती हैं, जैसे पक्षियों का कूंजन, भ्रमरों का गुंजार, सरिता का कल-कल, वृक्षों का मर्मर स्वर आदि डॉ0 डबराल भी अपने महाकाव्य में पक्षियों के कुंजन से प्रेरित होकर लिखते हैं-

''उषसि खे खगकूजित-निस्वने भ्रमर-गुंजन-गान-रसायने[2]''।
प्रमुदिता ननु काऽपि विराजते, मनजिसा प्रथिता मधु-भावना।।''

©SHARAD

अर्थात ''प्रात: काल के समय में, पक्षियों के कलरव में भौंरों के रस भरे गुनगुनाहट पूर्ण गीतों में फैलायी गई मन की प्रेममयी प्रसन्न कोमल भावना ही सुशोभित होती है।''

2. प्रकृति का रूप विस्तार–प्रकृति के रूप विस्तार के लिए कवि को प्रकृति से आत्मसात् होना आवश्यक है। रूप विस्तार में पर्वत, भूमि, मैदान, कुंज, पेड़-पौधे, नदी, समुद्र आदि के कमनीय चित्र कवि की कल्पना से चित्रित होते हैं। ऐसा ही चित्रण कवि डॉ0 डबराल के महाकाव्य में भी उपलब्ध होता है-

अधित्यकास्ताश्च मनोरमा धरा, जलाशया: प्रस्रवणानि निर्झरा:[3]।
उपत्यका: शाद्वलशोभनाऽटंवि:, भवन्तु सर्वे सुभगा: सुदक्षिणा:।।

अर्थात ''हिमालय की मनोरम भूमि, घाटियां, जलाशय, स्रोत, झरने, हरी-हरी घास वाले सुन्दर वन आदि सभी सौभाग्यदायी और अनुकूल हों।''

3. वर्णों के रंगों का ज्ञान–कवि प्रकृति को नाना रंगों में देखता है। इस प्रकार के चित्रण से कवि की भावना सूक्ष्म से सूक्ष्म हो जाती है। डॉ0 डबराल को अपने काव्य के लिये नीला रंग अत्यन्त मोहक लगता है तभी तो निलाकाश का चित्रण चित्रित करते हुए कहते हैं-

न कोऽप्युच्चरस्त्वत्तो, भूतलेऽस्मिन भविष्यति[4]।
स्रष्टा लिपिकरो व्योम्नि हिमश्रृंगैरिवांलिखत्।।

अर्थात ''हे हिमालय गुणों में तुम से ऊंचा इस पृथ्वी पर और कोई नहीं होगा मानो भाग्य का लेखा विधाता ने अनन्त नीलाकाश हिम के नुकले श्रृंगों से तुम्हारी सत्ता का रेखांकन कर दिया हो। ऊंचाईयों और बुलन्दियों का मानो पैमाना खड़ा कर दिया हो।''

(ख) प्रकृति का उद्दीपन रूप

प्रकृति का उद्दीपन रूप एक अत्यन्त व्यापक प्रयोग है प्रकृति मानव के सुख में सुखी एवं दुख में दुखी दिखाई देती है। डॉ0 डबराल ने अपने महाकाव्य में हिमालय की हवा को दुखी मानते हुए लिखा है-

गौरीशपादाम्बुजरेणुपावितो, गन्धर्वविद्याधर-यक्ष-सेवित:[5]।
भूतात्मभिर्योगिजनैविभूषितो, श्वासो हिमाद्रेरहमस्मि दुखित:।।

अर्थात ''भगवती उमा एवं महेश्वर के चरण कमलों की धूलि से पवित्र गन्धर्वो विद्याधर एवं यक्षों के द्वारा सुसेवित पवित्र महात्माओं एवं योगियों के द्वारा विभूषित मैं दु:खी हिमालय की हवा हूँ।''

1. प्रकृति का मानवीकरण–अमानव में मानव गुणों के आरोप को मानवीकरण कहा जाता है। डॉ0 डबराल ने 'देवतात्मा हिमालय' में एक स्थल पर पृथ्वी को नायिका मानकर अत्यन्त सुन्दर चित्रण किया है-

इयं धरित्री पुरूषस्य प्रीतये, विलासभावेन मुदा च लीलया[6]।
मनोहराभिर्हसतीव हेलया, नगस्यश्रृंगामलदन्त पंक्तिभि:।।

अर्थात ''यह पृथ्वी (उदासीन तटस्थ) उस पुरूष (परमात्मा) का विलासपूर्वक प्रसन्न करने के लिए हिमालय की चोटी रूपी सुन्दर शुभ्रदन्त पंक्ति के द्वारा हँसती जैसी प्रतीत हो रही है। अर्थात लेटी हुई पृथ्वी रूपी नायिका के हिमालय की पर्वत श्रेणियां, शुभ्रदन्त पंक्ति जैसी प्रतीत होती है।''

2. आलंकारिक रूप में प्रकृति का चित्रण–अलंकरण रूप में प्रकृति चित्रण सबसे अधिक हुआ है। अलंकारों के

लिए कवि को उपमानों का चयन जड़ अथवा चेतन प्रकृति से करना पड़ता है। प्रकृति के आंचल से लिये गये उपमान सौन्दर्य की सृष्टि करते हैं। डॉ0 डबराल के काव्य में प्रकृति का अलंकारिक रूप उपस्थित है। कवि को सुनहरी बर्फ राशि हिमालय की लटकती हुई जटा की भांति प्रतिभाषित हो रही है-

प्रभातकाले रविरागरंजितं, हिमालयेनोन्नतमस्तकेधृतम्[7]।
सुवर्णपिंगं तुहिनं विराजते, प्रलम्बमानेव जटास्तपस्विनः।।

अर्थात ''प्रातः काल के समय सूर्य के लाल रंगों में रंगी हुई और हिमालय के द्वारा शिखरों पर धारण की हुई सुनहरी पीली बर्फ राशि हिमालय की लम्बी लटकती हुई जटा सी सुशोभित हो रही है।''

3. प्रकृति में प्रतीक विधान-डॉ0 डबराल के महाकाव्य में सुन्दर प्रतीकों का चित्रण हुआ है। डॉ0 डबराल को हिमालय देवता, सुख का प्रतीक मन का महोत्सव लगता है। यह हिमालय महोत्सव का प्रतीक है। वे कहते हैं-

हिमालयों में परमं च दैवतं, पिता च माता स्वजनस्तथा गुरूः[8]।
धनंच धानयंच सुखंच वैभवं, गृहं पवित्रंमनसो महोत्सवः।।

अर्थात ''हिमालय मेरा परम देवता है। माता और पिता, स्वजन, गुरू, धन-धान्य, सुख और वैभव भी हिमालय ही है। हिमालय मेरा पवित्र घर है और मन का महोत्सव भी यही हिमालय है।

4. प्रकृति में रहस्याभिव्यक्ति-जब कवि के चित्त में प्रकृति का रोम-रोम इस प्रकार रम जाये कि, उसके अन्तस में अदृश्य सत्ता का दर्शन होने लगे वहां प्रकृतिवादी रहस्यानुभूति होती है। डॉ0 डबराल को हिमालय रहस्यमय लगता है। लिंगात्मक शिव हिमालय है। इसी हिमालय की रहस्यात्मकता को व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं-

आवभ्यां श्रृद्धयां दत्तां हिमकाव्यरसांजलिम्[9]।।
प्रीत्या चापीय तृप्यन्तु, पितरों मे पिपासिताः।।

अर्थात ''हे मेरे काव्यरस के प्यासे पितृगण! अब आप लोग हम दोनों के द्वारा श्रद्धा से प्रदत्त 'देवतात्मा हिमालय' महाकाव्य के रस की अंजलि को अथवा (हिमालय की जलांजलि को) प्रसन्नतापूर्वक पीकर तृप्त हों।''

5. प्रकृतिमें उपदेशात्मकता-कोरा एवं रूखा उपदेश सारहीन प्रतीत होता है। जब प्रकृति के माध्यम से उपदेश दिया जाता है तब उसकी अभिव्यक्ति कुछ भिन्न होती है। उसका प्रभाव अमिट होता है कवि के लिए स्वर्ग से बढ़कर है। कवि कहते हैं-

हिमालयोऽयं तु पुनस्त्रिविष्ठपः शुभः प्रशस्यः सनातनः[10]।
देहेन सार्द्धंच समस्तबन्धूभि-श्चिराय मर्त्यैः स्वसुखाय लभ्यते।।

अर्थात ''भूलोक का स्वर्ग हिमालय बिना तपस्या एवं बिना पुण्यों के इसी जीवन में इसी शरीर से ग्रहण किया जा सकता है। बन्धु-बान्धवों के साथ भी हिमालय का आनन्द लिया जा सकता है। इसलिये यह हर प्रकार से प्रशंसित है। शुभ है, सुलभ है, और सनातन है। स्वर्ग से बढ़कर है।''

6. पृष्ठभूमि व वातावरण सृष्टि का रूप-प्रबन्ध काव्यों में किसी गम्भीर स्थिति या प्रसंग के उपक्रम स्वरूप तथा भावोत्कर्ष के लिए कवि के द्वारा एक पृष्ठभूमि व वातावरण का निर्माण होता है। ''देवतात्मा हिमालय'' महाकाव्य में भी कुछ इसी प्रकार की सृष्टि हुई है-

समुद्रादुत्थित शान्तः स्वयम्भूर्भधरोहिमः[11]।
गंगाऽमृतकुटेनाय बभौ धन्वन्तरिर्यथा।।

अर्थात ''प्रलय काल के बाद समुद्र के जल से धीरे-धीरे ऊपर उठता हुआ शान्त सुन्दर स्यम्भू हिमालय पर्वत कुट में गंगारूपी अमृत को धारण किये हुए धनवन्तरी जैसा सुशोभित हुआ।''

'देवतात्मा हिमालय' महाकाव्य में डॉ0 डबराल का यह प्रकृति चित्रण देखने के पश्चात चित्त में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का आविर्भाव होता है। कवि ने इस काव्य में प्रकृति की शाश्वता को उभारा है। हिमालय कवि के लिए प्रेरणा है। हिमालय तो उनका देवता है। कवि की काव्य-मंजुषा नाना प्रकार के रंगों से युक्त है। जिसमें कवि ने कल्पना की तुलिका से प्राकृतिक चित्रों को चित्रित किया है।

सन्दर्भ सूची-

1. देवतात्मा हिमालय महाकाव्य-भूमिका
2. '' '' '' 1/23
3. '' '' '' 2/6
4. '' '' '' 5/17
5. '' '' '' 2/16
6. '' '' '' 5/2
7. '' '' '' 7/7
8. '' '' '' 3/4
9. '' '' '' 3/14
10. '' '' '' 4/7
11. '' '' '' 4/9